आलोचना

महादेवी वर्मा की रहस्यचेतना में लोक मंगल

डॉ. रवीन्द्रनाथ मिश्र

छायावादी काव्य की प्रमुख स्तम्भ महादेवी वर्मा के काव्य में व्याप्त रहस्यवाद किन मायनों में कबीर और मीरा के रहस्यवाद से भिन्न है तथा उनके साहित्य में लोकमंगल चेतना किस रूप में है इसका लेखा जोखा कर रहे हैं गम्भीर विचारक डॉ. रवीन्द्रनाथ मिश्र।

छायावादी काव्यान्दोलन में अपनी रहस्यवादिता के कारण महादेवी वर्मा का विशिष्ट स्थान है। इनके पद्य साहित्य में प्राय: आदि से अंत तक रहस्यवादी प्रवृत्ति की उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है, फिर भी उसमें लोक की झलक किसी न किसी रूप में विद्यमान है। पद्य की अपेक्षा गद्य में लोकजीवन की पीड़ा अधिक मुखर हुई है। आधुनिक युग में लोक की बात परलोक के माध्यम से व्यक्त करने के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य था। महादेवी वर्मा के समय का सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन आज की तरह मुक्त नहीं था। उस समय नैतिकता के बंधन एवं सामंती प्रवृत्ति का बोलबाला था। स्त्री-पुरुष संबंधों को लेकर आज की तरह स्वच्छंदता नहीं थी अपितु अनेक वर्जनाएं थीं। स्त्री शिक्षा का प्रचार-प्रसार नहीं था। घर की चहारदीवारी के अन्तर्गत ही नारी की दुनिया सीमित थी। शिक्षा इनके लिए वर्जित मानी जाती थी। इस प्रकार के परिवेश में नारी के लिए प्रेम एवं लोक के भाव व्यक्त करना मुश्किल था। पुरुषों के साथ खुलकर बात करना ठीक नहीं माना जाता था। 'प्रसाद' का 'आंसू'

मूलतः लौकिक प्रणय काव्य है, लेकिन वे इसे सीधे व्यक्त न करके अलौकिकता के माध्यम से व्यक्त करते हैं। जब पुरुष रचनाकार की यह हालत थी तो पतिविमुक्त एक स्त्री भला उस समय की पारिवारिक और सामाजिक जकड़बंदी को कैसे तोड़ सकती थी। यही कारण है कि महादेवी अपने सम्पूर्ण मनोभावों को रहस्यात्मक ढंग से व्यक्त करती हैं। रहस्यवाद का लिबास उठाकर यदि हम उनकी कविताओं का अवलोकन करें, बहुत सारी कविताएं लोकजीवन की पीड़ा से ओत-प्रोत हैं।

छायावादी कवियों में महादेवी के संदर्भ में यह कहा जाता है कि ये आधुनिक मीरा हैं। इनकी रचनाओं में युगबोध के स्वर नहीं हैं और ये मात्र नीरभरी दुख की बदली की कवयित्री हैं। डॉ. नामवर सिंह का मन्तव्य है कि ''उनकी 'नीरभरी दुख की बदली' का दुःख केवल प्रणय-व्यथा ही नहीं है, उसमें अनेक प्रकार के सामाजिक असन्तोष घुले मिले हैं।''

महादेवी वर्मा के समय में कांग्रेस का उदय, गांधीजी का राजनीति में पदार्पण, रूसी क्रान्ति, राजनैतिक चेतना का संवेदनात्मक स्तर पर उद्वेलन, पश्चिमी विचारों, मूल्यों और शिक्षा का प्रसार, यांत्रिकशक्ति एवं विज्ञान का बड़े पैमाने पर आविष्कार हो रहा था। इस प्रकार की परिस्थिति में प्रकृति के सुकुमार कवि पंत भी द्रुमों की माया का परित्याग कर 'तुम मेरे मन के मानव' का गीत गाने लगते हैं। यह सच है कि महादेवी जी का मानव प्रेम उतना मुखर नहीं है जितना कि पंत का फिर भी जीवन की छटपटाहट अन्य कवियों से कम नहीं है। अन्तर केवल इतना है कि इन्होंने इस धड़कन को प्रकृति, प्रेम, दुख और वेदना के माध्यम से व्यक्त किया।

छायावाद के अन्य कवि कालान्तर में प्रकृति, रहस्य और अनंत आकाश की तरफ से मुख मोड़कर मार्क्सवाद से प्रभावित हुए परन्तु महादेवी वर्मा तब भी अपनी कविताओं और गीतों में अपने अंदर होने वाले शोर से ही साक्षात्कार करती रही। इस दृष्टि से उनके काव्य को हम भले ही समय से कटा हुआ करार दें परंतु व्यापक अर्थ में वह आज भी प्रासंगिक हैं। क्योंकि उसमें जीवन के प्रति एक मोह हैं, निश्छल, भावुकता है। विरह उनके काव्य की धारा जरूर है पर इसकी मंजिल स्थूल सासारिक नहीं है। कवयित्री को इस बात का पूरा एहसास है कि मिलन में एक किस्म का ठहराव है, गतिशीलता का अभाव है। वे कहती हैं-

मिलन का मत नाम लो,
मैं विरह में चिर हूं।

विरह में चिर रहते हुए भी वे सुख की अपेक्षा दुख को गले लगाती हैं और इसी में रहते हुए ही लोगों की मंगलकामना करती हैं. उनका कथन है कि 'दुख मेरे लिए निकट जीवन का ऐसा काव्य है जो संसार को एक सूत्र में बांध रखने की क्षमता रखता है। हमारे असंख्य सुख हमें चाहे तो मनुष्यता की पहली सीढ़ी तक भी न पहुंचा

सके, किंतु हमारा एक बूंद आंसू भी जीवन को अधिक मधुर और उर्वर बनाए बिना नहीं गिर सकता। मनुष्य सुख को अकेला भोगना चाहता है परंतु दुख सबको बांटकर।

सुख-मधु में क्या दुख का मिश्रण,
दुख विष में क्या सुख मिश्री-कण।
जाना कलियों के देश तुझे,
तो शूलों से शृंगार न कर,
कहता जग दुख को प्यार न कर।

महादेवी ने व्यक्ति के माध्यम से अपनी समकालीन सामाजिक व्यवस्था को समझने का स्तुत्य प्रयास किया है। इसके लिए उन्हें रहस्यवाद का सहारा लेना पड़ा है। रहस्य का अर्थ है एकान्त-अन्तर्मुखी वृत्ति। हम भीड़-भाड़ और कलरव कोलाहल के बीच इतने बिखर गए हैं कि अपना अन्तदर्शन नहीं कर पाते। आत्म साक्षात्कार के लिए एकान्त की आवश्यकता होती है। इस एकान्त में उन्होंने ब्रह्म, जीव, जगत और माया आदि तत्वों की व्याख्या प्रस्तुत की। उन्हें लगा कि मानवमात्र दु:खी है। दुख की भावना इनके काव्य में अधिक व्यंजित हुई है और इसके माध्यम से वे समस्त मानवजाति को एक सूत्र में बांधने का प्रयास करती हैं।

मेरे बिखरे प्राणों में, सारी करुणा ढुलका दो।
मेरी छोटी सीमा में, अपना अस्तित्व मिटा दो।
पर शेष नहीं होगी यह, मेरे प्राणों की क्रीड़ा।
तुमको पीड़ा में ढूंढा, तुममें ढूढूंगी पीड़ा।।

महादेवी वर्मा ने सामाजिक बदलावों की धड़कन को पहले ही महसूस कर लिया था, कि लोग थोड़े से स्वार्थ के लिए कैसे विचलित हो जाते हैं। पुष्प के माध्यम से अपनी व्यथा को व्यक्त करती हुई कहती हैं-

मत व्यथित हो फूल, किसको सुख दिया संसार ने,
स्वार्थमय सबको बनाया है, यहां करतार ने,
विश्व में हे फूल, तू सबके हृदय भाता रहा,
दान कर सर्वस्व फिर भी, हाय हर्षाता रहा,
जब न तेरी ही दशा पर, दुख हुआ संसार को,
कौन रोयेगा सुमन! हमसे मनुज नि:सार को?

'कौन रोयेगा सुमन' में कवयित्री के हृदय का क्षोभ, असमर्थता, बेबसी और व्याकुलता व्यंजित होती है। बीसवीं शती को लगभग पूर्ण रूप में जीने वाली महादेवी वर्मा ने सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक परिवर्तनों को भली-भांति देखा

एवं समझा है। इसमें वे गरीबी को सबसे बड़ा अभिशाप मानती हैं। उनकी सम्पूर्ण सहानुभूति इस वर्ग के साथ जुड़ी है। वे अपने दुख को उनके दुख में शामिलकर एकाकार हो जाना चाहती हैं।

कहता है जिनका व्यथित मौन,
'हम-सा निष्फल है, आज कौन?
निर्धन के धन-सी ह्रास- रेख,
जिनकी जग ने पाई न देख,
उन सूखे ओठों के विषाद-
में मिल जाने दो हे उदार।
फिर एक बार बस एक बार।

महादेवी जी की प्रेमभावना स्वदेश-प्रेम के रूप में भी प्रकट हुई है। उन्हें अपने देश के मानवों से, यहां तक कि वन वल्लरियों, पर्वतों, नदी और निर्झरों से भी प्रेम है। मातृभूमि के प्रेम से वशीभूत होकर वे वीरों को प्रतिकूल परिस्थितियों में भी ललकारती हैं:-

बांध लेंगे क्या तुझे यह मोम के बंधन सजीले?
पंथ की बाधा बनेंगे तितलियों के पर रंगीले?
विश्व का क्रन्दन भुला देगी मधुप की मधुर मुनगुन,
क्या डुबा देंगे तुझे यह फूल के दल ओस गीले?
तू न अपनी छांह को अपने लिए कारा बनाना,
जाग तुझको दूर जाना।

दर असल महादेवी का मूलराग रहस्यभाव से चाहे जितना भी गंभीर, व्यापक और विराट हो गया हो फिर भी उसकी लोकमंगल प्रेरणा और युगीन प्रासंगिकता को विस्मृति नहीं किया जा सकता। उनके रहस्यात्मक गीतों में व्यक्त भावात्मक चुनौतियां, स्वाभिमान की उक्तियां और आत्मविश्वासपरक उद्‌गार मात्र एक कवयित्री के उद्‌गार न होकर सम्पूर्ण नारी जाति की गरिमा और उसके अस्तित्व की चिनगारियां हैं। इसमें उनके भावों को तत्कालीन नारी दशा से सर्वथा भिन्न नहीं किया जा सकता।

महादेवी वर्मा स्वयं अपने जीवन में शिष्ट रही और अन्य नारियों से इसकी अपेक्षा भी करती हैं। इसी में वे उसका कल्याण देखती हैं। वे भारतीय नारी के गौरव का अर्थ पुरुष के साथ संघर्ष और प्रतिशोध की भावना को नहीं मानती थी। इस मार्ग पर न चलकर वे पंथ होने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला में, विश्वास करती हैं।

सामाजिक एवं पारिवारिक स्तर पर अन्याय और अत्याचार का विरोध जिस उग्रता और हिंसा से आज किया जा रहा है, जिसका कि परिणाम बहुत ही

विध्वंसकारी हो रहा है। महादेवी इस प्रकार की प्रवृत्ति का विरोध कर उसमें अमंगल की भावना को देखती हैं। वे पीड़ा एवं विरोध को सहज भाव से स्वीकार करते हुए उसका प्रतिकार नहीं करना चाहती। यहां पर वे गांधी जी के प्रभावों से प्रभावित लगती हैं।

मिथ्या प्रिय मेरा अवगुण्ठन,
पाप शाप, मेरा भोलापन,
चरम सत्य, यह सुधि का दंशन,
अन्तहीन, मेरा करुणा-कण,
युग-युग के बन्धन को प्रिय,
पल में हंस मुक्ति करूंगी मैं!
आंसू का मोल न लूंगी मैं!

रहस्यवाद का आवरण उठाकर यदि महादेवी की कविताओं का मूल्यांकन किया जाए तो वे लोकजीवन के धरातल पर अधिक प्रामाणिक दिखाई देंगी। हमेशा अन्तर्मुखी रहने वाली कवयित्री ने लोक को भी अपने सीने में दबाए रखा है, जो कि उनकी रहस्यवादी कविताओं के माध्यम से व्यक्त हुआ है।

यह मंदिर का दीप इसे नीरव जलने दो!
झंझा है दिग्भ्रान्त रात की मूर्च्छा गहरी,
आज पुरानी बने ज्योति का यह लघु प्रहरी,
जब तक लौटे दिन की हलचल,
तब तक यह जागेगा प्रतिपल
रेखाओं में भर आभा-जल,
दूत सांझ का इसे प्रभाती तक चलने दो!

यहां दीपक को साधना के प्रतीक के रूप में लिया जा सकता है, तो किसी की याद में जलने वाला दीपक भी हो सकता है। इसके साथ ही यह हमें 'असतो मा सदगमय' और 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' का भी संदेश देता है। महादेवी जी पर बौद्धदर्शन का प्रभाव सांस्कृतिक दृष्टि से परिलक्षित होता है। उनकी दार्शनिक मान्यताएं वेदान्त एवं औपनिषदिक परम्परा के अधिक समीप है। बौद्ध धर्म अज्ञान और तृष्णा को दुःख का कारण मानता है, जो कि उपनिषदों में मिलने वाली अविद्या और काम के रूपान्तर हैं।

भिक्षुक सा यह विश्व खड़ा है पाने करुणा प्यार
हंस उठ रे नादान खोल दे पंखुरियों के द्वार;

रीते कर ले कोष
नहीं कल सोना होगा धूल।
अरे! तू जीवन-पाटल फूल।

बुद्ध की व्यापक करूणा और विश्व की मंगलकामना के भाव हमें महादेवी वर्मा की कविताओं में मिलते हैं। महादेवी वर्मा का मानना है कि यदि मनुष्य आपसी महत्वाकांक्षाओं को कुछ कम करके दूसरों के प्रति समदुखी बन जाए तो उसका दुख काफी हद तक कम हो जाएगा। दुख को वे वरदान सदृश स्वीकार करती हैं-

दुखमय सुख, सुख भरा दुख,
कौन लेता पूछ जो तुम ज्वाल-जल का देश देते?
नयन की नीलम तुला पर मोतियों से प्यार तोला,
कर रहा व्यापार कब से मृत्यु से यह प्राण भोला,
भ्रान्तिमय कण, श्रान्तिमय कण,
ये मुझे वरदान जो तुम
मांग ममता शेष लेते।

महादेवी वर्मा के काव्य में वेदना, दुख, विरह और करुणा के स्वर प्रमुख रूप से विद्यमान हैं. इसीलिए तो वे कहती हैं-

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात,
वेदना में जन्म, करुणा में मिला आवास,
अश्रु चुनता दिवस इसका, अश्रु गिनती रात,
जीवन विरह का जलजात।

वेदना एवं करुणा में हृदय को द्रवीभूत करने की जो शक्ति है, वह किसी अन्य भावना में नहीं है। वह दुख को गले लगाती हुई कहती है कि 'कहता जग दुख को प्यार न कर' यह भला मुझसे कैसे सम्भव है? क्योंकि उसी में वे लोकमंगल की सही पहचान करती हैं।

जग करुण-करुण मैं मधुर-मधुर,
दोनों मिलकर देते रज कण,
चिर करुण मधुर सुन्दर सुन्दर।

मानवीय करुणा को वे भारत के जर्जरित समाज में देखती हैं, और सबकी मंगल कामना करती हैं।

सब आंखों के आंसू उजले, सबके सपनों में सत्य पला।
जिसने उसको ज्वाला सौंपी,
उसने इसमें मकरन्द भरा,
आलोक लुटाता वह घुल-घुल
देता झर यह सौरभ बिखरा।
दोनों संगी पथ एक किंतु कब दीप खिला कब फूल जला?

दु:ख को आधार मानकर वे विरह में लीन होना चाहती हैं, यही दुख की भावना संसार के साथ उनकी एकात्मकता को विकसित करती है और वे सभी को यह संदेश देना चाहती है कि वे अपने आस-पास के व्यापक संसार के दुख का अनुभव करें-

मेरे हंसते अधर नहीं जग
की आंसू लड़िया देखो।
मेरे गीले पलक छुओ मत,
मुर्झाई कलियां देखो।

दुख के मार्ग पर चलते हुए दुख ही उनके लिए विषस्य विषमौषधम बन गया। वे स्वयं कहती हैं कि दुख मेरा निर्माण बन गया। दुखवादी व्यक्ति अतिवादी नहीं होता और अपने दुख को समूचे धरती पर दुख बना लेने वाला व्यक्ति करुणावादी या वेदनावादी हो जाता है। महादेवी वर्मा का दुख व्यष्टि का न होकर समष्टि का था जिसमें करुणा, स्नेह एवं लोकमंगल की भावना कूट-कूट कर भरी थी। भारतीय नारी की अस्मिता के प्रति वे सदैव सतर्क रही हैं।

महादेवी वर्मा की काव्ययात्रा में उनकी रहस्य चेतना सदैव विद्यमान रही है जिसके माध्यम से उन्होंने जीवन जगत को जानने समझने का प्रयास किया है। स्वच्छंदतावादी काव्य से अपने रहस्यवाद को जोड़कर उसे आधुनिक रूप दिया और मध्ययुगीन रहस्यवादी प्रवृत्तियों से उसके पृथक व्यक्तित्व की घोषणा की। प्राचीन रहस्यवाद योग, साधना आदि पर आधारित था, किसी सीमा तक साम्प्रदायिक था। इसी कारण कबीर के रतिभाव के होते हुए, वह गूढ़ार्थों और अनबूझे प्रतीकों में चला गया। सामान्य जनता से उसका संबंध स्थापित नहीं हो पाया। महादेवी वर्मा ने आधुनिक रहस्यवाद को धर्मनिरपेक्ष प्रमाणित किया और आत्मसमर्पण को उसका प्रस्थानबिंदु घोषित किया।

'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत' और 'दीपशिखा' की कविताओं में रहस्यमयी सत्ता के प्रति निसर्गजात भावनाओं का समुच्छरण लक्षित होता है। 'नीहार' का शाब्दिक आशय है 'तद्नुरूप'। इसमें जहां एक ओर वैचारिक प्रकाश की हल्की

स्थिति है वहीं अस्पष्ट-सी भावनाओं की सांधता मुखर है। 'रश्मि' में कवयित्री की चेतना धीरे-धीरे चैतन्यिक सोपानों पर आरुढ प्रतीत होती है। 'नीहार', का 'नी' और 'रश्मि' के 'र' जैसे सोपानों से निर्गत 'नीरजा' में चिंतन और भावना का संतुलन मिलता है जो कि 'सांध्यगीत' और 'दीपशिखा' में प्रकर्ष को प्राप्त होता है। इस क्रम में देखने पर ऐसा स्पष्ट दिखता है कि कवयित्री की रहस्यात्मक चेतना विचारों का सहारा पाकर निवात निष्कम्प दीपशिखा सी स्थिर हो जाती है।

कई विद्वानों ने यह प्रश्न उठाया है कि रहस्यमयी सत्ता के प्रति अपेक्षित साधना के बिना संयोग वियोग की दशाओं में पहुंचना और उसकी अभिव्यक्ति करना कैसे सम्भव है? इसका उत्तर देती हुई वे कहती हैं कि-

जो न प्रिय पहचान पाती
दौड़ती क्यों प्रति शिरा में
प्यास विद्युत सी तरल बन।

कतिपय नगेन्द्र प्रवृत्ति मनोवैज्ञानिक आलोचकों ने महादेवी की इस वेदना में लौकिक भावनाओं के दमन की संभावना की है। क्योंकि ये लोग उनके दाम्पत्य जीवन के शीघ्र विघटित हो जाने के कारण ऐसा मानते हैं कि इन्होंने लौकिक अतृप्त रति पर अध्यात्म का आवरण चढ़ाया है।

नवजागरण की सांस्कृतिक चेतना लोकमंगल के माध्यम से आत्ममंगल का संदेश देती है। आलोच्य कवयित्री के समस्त साहित्य पर दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि उनकी मनोदशा लोकोन्मुख हो गई थी। लोकोन्मुखी करुणा से स्नात चेतना में रहस्यमयी सत्ता के प्रति रागात्मक लगाव संभव है। इसीलिए उन्होंने कहा कि आधुनिक युग में रहस्यवाद के दो सोपान हैं- पहला सम्पूर्ण प्रकृति पर किसी एक मधुर व्यक्तित्व का आरोपण और दूसरा उसके प्रति आत्मसमर्पण का है। मनुष्य का अन्तकरण कहीं रमना चाहता है, इसलिए उसे कोई आलम्बन तो चाहिए। निश्चय ही वह आलम्बन प्रकृति और परमेश्वर का रहा है जिसके माध्यम से वह अपने भावों की अभिव्यक्ति करता रहा है। आज उसे अपने भावों को व्यक्त करने के विविध आयाम विद्यमान हैं। वैसे तो रहस्यवादी चिंतन के अन्त:सूत्रों में लोकमंगल की भावना अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान ही रही है, जो कि कालान्तर में काफी मुखर हुई है। □